आनन्दम्



बाम के झरोखे से

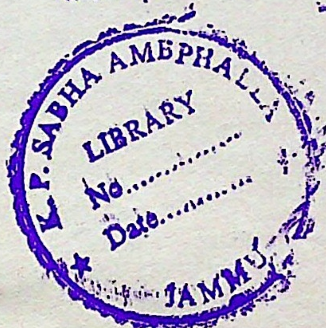




वाम के झरोखे से

(प्रारम्भिक गीत एवम् कविताओं के साथ)

लेखक/कवि की ओर से भेंट
—प्रकाशक



सुतीक्ष्ण कुमार 'आनन्दम्'



साक्षर प्रकाशन

४०२–अम्बफला, जम्मू (तवी) १८०००५

प्रकाशक :
श्रीमती सुदर्शन शर्मा
साक्षर प्रकाशन,
४०२–अम्बफला
जम्मू (तवी) १८०००५

मूल्य : ४० रुपए

प्रथम संस्करण : अगस्त १९९२

मुद्रक : एस० एन० मगोत्रा प्रिंटिंग प्रैस,
गली खिलोनेयां, पक्का डंगा जम्मू (तवी)

सूची

दो शब्द

मेरे गीत मित्र !

जब जब मेरी रचनाओं के किसी संकलन के प्रकाशन की तैयारी होने लगती तब तब एक फाइल में लगे हुए आयु के भार से मैले पड़ गए जीर्णावस्था भोगने को विवश अनेक पन्ने मेरा ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने लगते। मैं इन्हें देखता, सहेजता और एक नया नाम दे कर छोड़ देता।

हर बार एक नया नाम : कभी 'मेरे गीत, मेरे मीत', कभी 'मेरे तुम्हारे गीत' कभी 'बाम के झरोखे से' और कभी.........।

मेरी ये प्रारम्भिक रचनाएं हर बार उपेक्षा की पात्र बन कर मेरी प्रकाशित पहली कृतियों में दी हुई प्रकाशनार्थ पुस्तकों की सूची में सम्मिलित होती रहीं।

इनके प्रकाशन से जुड़े विलम्ब के कारणों में 'नई कविता' के प्रति प्रवृत्ति की भूमिका रही है । इससे मैं इनकार नहीं करता।

'नई कविता' से मेरा अभिप्राय 'नई कविता, अ-कविता, कविता, विचार कविता, संचेतन कविता, आम आदमी की कविता, समकालीन कविता इत्यादि से है। फिर मुहावरों की बात से है। समकालीन कविता का मुहावरा। कितने ही झण्डों तले कितने ही नाम कितने ही रूप कविता के नाम पर हमारे सामने लाए गए आए। कितने ही बुद्धिजीवी और बुद्धिजीवी होने का दम भरने वाले इनके साथ बहे और बह गए। अभी न जाने कितने ही नाम और रूप अपने अपने मुहावरे संजोते हुए गर्भावस्था में हैं और होंगे।

बहुधा यही देखा है कि जिसको सात व्यक्ति जुड जाते हैं, बड़ी बड़ी पत्र-पत्रिकाओं का महारा मिल जाता है या अपनी एक पत्रिका निकालने की सामरथ जुट जाती है, वही एक और कविता के नए घोषणा पत्र के साथ सामने आ जाता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात से अब तक ऐसा ही नहीं हुआ है क्या?

हिन्दी और संस्कृत के पारम्परिक कवियों ने भी अनेक प्रयोग सुझाए और अनेक सिद्धांत प्रतिपन्न किए हैं। यथा किसी ने 'रस' को माना, किसी ने 'शब्द और अर्थ' के संयोग को माना किसी ने 'अलंकार' को, किसी ने 'चमत्कार' को, किसी ने 'रमणीक अर्थ' को, किसी ने 'रीति, गुण, अलंकार, रस, वृत्ति आदि के निर्दोष संयोग' को।

'निर्दोषा लक्षणवती सरीतिर्गुणभूषिता।
सालंकाररसानेक वृत्तिवाक्काव्यामभाक्॥

(जयदेव)

इन कवियों ने देश काल वातावरण की आवश्यकताओं के अनुसार अर्थात अपनी अपनी समकालीनता के अनुसार रचनाएं की हैं। किन्तु इन्होंने भी कविता का वर्तमान जैसा रूप प्रस्तुत करने की चेष्टा नहीं की। चम्पु के प्रयोग में भी इन्होंने गद्य और पद्य दोनों की मर्यादाओं का पालन किया है। अपना कथन प्रस्तुत करने में भी ये कवि किसी प्रकार से पीछे नहीं रहे। यही कारण है कि तुलसीदास, कबीर दास, सूरदास, मीरा बाई इत्यादी की पदावलियां, दोहे, चौपाइयां वगैरा घर घर घर कर गईं। आज भी इनमें समकालीनता है।

आधुनिक काल के बहुतों ने शास्त्रोक्त छन्दों से मुक्त हो कर स्वच्छन्द कविताएं और गीत रचनाएं भी की हैं किन्तु कविता की रूप और गुण संबंधी पारम्परिक मान मर्यादाओं को नहीं भुलाया। स्वच्छन्द से मेरा अभिप्राय अपनी मनचाही मात्राओं के चरणों की समानता और संख्या से है।

इस संग्रह में प्रस्तुत अपनी इन प्रारम्भिक रचनाओं में से कोई न कोई गीत मैं अब भी गुनगुनाने से बच नहीं पाता।

जहां तक गुनगुनाने और सस्वर गायन का संबंध है १९६२ से १९६६-६७ तक जम्मू का साहित्यिक वातावरण इस बात का साक्षी है कि मैंने साहित्यिक सभाओं और अन्य विशेष आयोजनों में 'नई कविताएं' गा कर सुनाई हैं। १९६८ में प्रकाशित कविता संग्रह 'देखतीं आकाश आंखें' की सभी और १९७४ में प्रकाशित पुरस्कृत कविता संग्रह 'नौका का इतिहास' की बहुत सी कविताएं उन्ही में से हैं।

अवसर मिलने पर अब भी उस समय के कई श्रोता मेरी उन कविताओं की चर्चा छेड़ते हुए 'एक भाव रूपक' सुनाने के लिए कहते हैं :

'उबल उबल कर चावल
बंद पतीले में बुड़क रहे हैं
बोल रहा है ढक्कन भापवश हो कर
मांड बह रही है बाहर
परतों पर परतें जमा रही है
घुटे घुटे ज्यों भाव हों मानव के !'

एक रचना जिसका संचारी भाव कश्मीरी लोकोक्ति को सार्थक करता है, कहीं खो चुकी है। मात्र इतना स्मरण है—

'चूल्हा भी चोर,
हाण्डी भी चोर !'

निस्संदेह मेरी 'नई कविता' श्रोताओं और पाठकों से विहीन नहीं है तथापि अनेक वर्षों से एक अंतर्द्वन्द्व झेल रहा हूं। इससे मुझे आत्मतुष्टी तो मिलती है किन्तु सम्पूर्ण नहीं। नई कविता से उच्चाट-सा हो रहा हूं। ऐसा क्यों ?

खैर ! आज वह दिन आ गया जब अपने प्रथम खंड की रचनाओं के प्रति और अधिक उपेक्षा सामरथ से बाहर हो गई है। इनमें से कुछ का चयन 'बाम के झरोखे से' नाम पाकर ऐसी ही कुछ बाद की रचनाओं के साथ आपके समक्ष है।

'बाम' शब्द मुझे श्रीनगर (कश्मीर) में निवास के दिनों की देन

है। कविता के प्रथम स्वर के साथ मेरा संयोग वहीं हुआ है।

'मेरे मन में उमंग,
तेरे तन में तरंग,
चलें दोनों अंग संग !'

और

'मोह लिया मुझे कश्मीर ने,
जन्नत की तस्वीर ने !'

मेरे गीत मित्र !

आशा है मेरे पाठक मेरी इस कृति को भायेंगे।

४०२—अम्बफला.
जम्मू (तवी) १८०००५
२१-७-१९९२

सुतीक्षण कुमार 'आनन्दम्'

बाम के झरोखे से

बाम के झरोखे से दो पंछी झांक रहे थे !

एक ने देखा नील गगन,
एक ने देखा धरा सुमन,
चुपचाप से वे दोनों विस्मय फांक रहे थे !
बाम के झरोखे से दो पंछी झांक रहे थे !

एक बोला इतना ऊंचा,
एक बोला इतना नीचा,
ऊपर नीचे का अंतर दानों आंक रहे थे !
बाम के झरोखे से दो पंछी झांक रहे थे !

उड़े वे ऊपर ही ऊपर,
आए नीचे घूम फिर कर,
औ' सोच समझ कर बोले,
'नीचा ही ऊंचा है' वे नीचे तांक रहे थे !
बाम के झरोखे से दो पंछी झांक रहे थे !

प्रणय रेखा

कवि के मधुर गीतों में,
प्रकृति के सुप्रतीकों में,
मैंने तुम्हारा मधुर हास खिलते देखा है

प्रणय-स्वर खिलखिलाए जब,
मुग्ध-मन मुस्कुराए जब,
मांग में सिंदूर भरने चेतना-रव आए जब !
बादलों में झूल रहा,
अपनी सुधी भूल रहा,
झिलमिल झिलमिल-सा एक तारा तिरते देखा है !
मैंने तुम्हारा मधुर हास खिलते देखा है !

वृन्दवाद्य धुने जब जब,
सूक्ष्म भाव बुने जब जब,
शिखरों को छूते देखे बदली के अवयव जब,
अव्यय स्वर की साध में,
सुख-केलि-धुन अगाध में,

तकदुम तुम्हारे हाव को हंसते देखा है !
मैंने तुम्हारा मधुर हास खिलते देखा है !

पिक पिकी सुखद-ग्रस्त हुए,
थे जब क्रीड़ा-व्यस्त हुए,
जगत को भूल-भाल थे किसी लोक में मस्त हुए,
तुम्हारे जी का मौन स्वर,
गरिमा देता दा अमर,
मैंने तुमको मंद-सा गुन गुन करते देखा है !
मैंने तुम्हारा मधुर हास खिलते देखा है !

तुम गा रही थी

मानो न मानो तुम गा रही थी !

विस्मित मौन थे मन प्राण मेरे,
है कौन गावे ये गान मेरे,
तरु सब झुके थे ऋतु भा रही थी,
मानो न मानो तुम गा रही थी !

थी जागी हुई प्रिय प्यार बेला,
मस्ति में रत था रूप का मेला,
हरिवास अवयव सहला रही थी,
मानो न मानो तुम गा रही थी !

थी भीनी सुधा-सी रस घोलती,
चम्पा चमेली थी मन तोलती,
सारिका सी गुंजित भा रही थी,
मानो न मानो तुम गा रही थी !

वाद्य बनी थी जलधारा मोटी,
थी संगत करती कोकिल-छोटी,
सातों सुरों में रव ला रही थी,
मानो न मानो तुम गा रही थी !

पिक के नाम

ऐ अमराव के मीत,
सरस हैं तेरे गीत !

कहां से सीखे तुमने,
मधुर मधुर ये राग !
है एक एक स्वर इनका,
प्रसरा रहा अनुराग !
युग युग के तुम गायक,
सच मान रे मनजीत !
ऐ अमराव के मीत,
सरस हैं तेरे गीत !

नीरस मन गा उठता,
अवसाद भूल जाते !
सुखदायक स्वर बजते,
शूल बन फूल जाते !
अरे प्राण - धन दायक,
छेड़ तानें सुख - भीत !
ऐ अमराव के मीत,
सरस हैं तेरे गीत !

किस बिरहाए का मर्म,
है दे रहा आह्वान !
जो इच्छित है तुमको,
नवल उसका सम्मान !

आधि-भार के हरता,
यह मुझे सिखा दे रीत !

ऐ अमराव के मीत,
सरस हैं तेरे गीत !

क्यों

मेरा अर्चण न भाया क्यों ?

मैंने बहुत चाहा तुम को,
प्रतिपल है सराहा तुम को,
तो फिर तुमने हर बार मुझे है बोलो ठुकराया क्यों ?
मेरा अर्चण न भाया क्यों ?

उत्तर बोलो दे सकोगे,
अथवा यों ही मौन रहोगे,
तुमको समर्पित प्यार मेरा बादल-सा भरमाया क्यों ?
मेरा अर्चण न भाया क्यों ?

अनिच्छे ही चाहे बोलो,
नहिं देव तुम मेरे बोलो,
चुप ही रहना था तो कहो पूजा-ढंग सिखलाया क्यों ?
मेरा अर्चण न भाया क्यों ?

दीप जला

रात भर दीप जला, दीप जला !

सूने जगत के सूने पथ पर,
सबल पांव बढ़ते रहे हठ कर,
सरल दीप-शिखा के साए साए सपनों का सुनहरा साथ पला !
रात भर दीप जला, दीप जला !

एकांत - वास के नीरव गान,
नहीं बन सके पल भर की त्राण,
जो जाना हुआ पहचाना था वह गीत अधूरा छोड़ चला !
रात भर दीप जला, दीप जला !

दोषी नहीं फिर भी हूं दोषी,
सोच से रहती है खामोशी,
कहने लगा था पर कह न सका पंछी का उर अतिः जला !
रात भर दीप जला, दीप जला !

गीत तुम्हारे

कहां गए वे गीत तुम्हारे ?

जगे प्यार की हरी दूब्र पर,
हुई जिनकी रचना खूब तर,
लय ताल के वे मोत तुम्हारे !
कहां गए वे गीत तुम्हारे ?

सरित के कल कल कल-नाद में,
था रवित हिय जिनकी याद में,
बृंद-सुख वे पुनीत तुम्हारे !
कहां गए वे गीत तुम्हारे ?

क्यों दीप को न और सजाया,
स्नेह - सिक्त जोति को जगाया,
हुए रास्ते विपरीत तुम्हारे !
कहां गए वे गीत तुम्हारे ?

एकांत गीत

पंछी रे, तू काहे मचावत शोर ?

भीने भीने पवन के मंद झकोर,
मधुर मिलन की मादकता में विभोर,
रुन झुन करते भवरे की नाईं
छूने लगे हैं हिया के ओर छोर !
पंछी रे तू काहे मचावत शोर ?

चहक-महक करती मोसम की वाणी,
चिर-तृष्णा उपजाती हिय अकुलानी,
परस परस कर मन की गरिमा प्रतिपल
देने लगी है कुतूहलवश झकझोर !
पंछी रे तू काहे मचावत शोर ?

आ बैठ मेरे अंगना में दो पल,
दूंगा तोहे चुगने को मीठे फल,
हंसी हंसी में खिल खिल कर कर दूंगा
समर्पित मैं तुझको नेहातुर मन मोर !
पंछी रे तू काहे मचावत शोर ?

कौन तुम

कौन तुम दीप-शिखा बन जलते हो?

प्रणय की सरगम का करते उद्‌गम!
यथामीत लुभाते हो अंतरतम!
शलभ-स्वर से हिय विभोर करते हो!
कौन तुम दीप-शिखा बन जलते हो?

चमचमाते भावों का चमत्कार।
करता सदा सांत्वना का संचार!
जल जल कर धीर-तरंग भरते हो!
कौन तुम दीप शिखा बन जलते हो?

कलह क्लेश का भोगी विश्व सारा!
शांति द्रुम का अभिलाषी बेचारा!
इच्छित करता जब नेह की धारा!
सबल रश्मिजाल से तम हरते हो!
कौन तुम दीप शिखा बन जलते हो?

वह मीत भी क्या

पलट दोगे यह गीत भी क्या ?

सावन भादों बहुत सहा है,
मात्र शिशिर अब्र शेष रहा है,
ठुकराना चाहोगे तुम मर्मरी पतझड़ को प्रीत भी क्या ?
पलट दोगे यह गीत भी क्या ?

जग - पीड़ा से भरा पड़ा मैं,
झंझा से हूं अड़ा लड़ा मैं,
हत कर दोगे बिना सराहे ही यह अंत की जीत भी क्या ?
पलट दोगे यह गीत भी क्या ?

धुन कर वीणा के तार सभी,
देखे जीवन के सार सभी,
बिसरा दोगे मन भावनी सरगम की पावन रीत भी क्या ?
पलट दोगे यह गीत भी क्या ?

सुन लो, सम्भवतया भा जाए,
गायन मेरा काम आ जाए,
इतना-सा भी अनुरोध न मान सके जो वह मीत भी क्या ?
पलट दोगे यह गीत भी क्या ?

कौन सुनेगा

हा ! अब ढलते जीवन की कहानी कौन सुनेगा ?

हिम-परतों से दब गई देखो लहरों की हलचल,
इत उत जभ गईं जल-धाराएं सुप्त हुआ कलकल;
दब गईं अनचाहे कलियां इतनीं कौन चुनेगा ?
हा ! अब ढलते जीवन की कहानी कौन सुनेगा ?

मत्त हुईं सी पवन-तरंगें तन मन को हैं भेद रहीं,
बीते हुए यौवन की व्यथा पर हैं कर खेद रहीं,
अनचाहे, सपने बीत गए फिर से कौन बुनेंगा,
हा! अब ढलते जीवन की कहानी कौन सुनेगा ?

एक एक कर झड़े सब पल्लव लोप हुई हरियाली,
बन गई देवी करुणा की हाला की मतवाली,
ठंडी सांसों की देहरी पर स्वर कौन धुनेगा ?
हा! अब ढलते जीवन की कहानो कौन सुनेगा ?

पाति लिख दे

पाति लिख दे रे,
पाति लिख दे !

हरी दूब में कुछ फूल खिले हैं,
झर झर निर्झर के कूल खिले हैं,
आकुल-सा निरख रहा आली,
मुकुलित मोद ख़्याति लिख दे रे !
पाति लिख दे रे !

पल्लव-मति की गति चंचल-सी,
सुख सौंपती हवा अंचल की,
इत उत केलि करतीं तितलियां,
सब दिन और राति लिख दे रे !
पाति लिख दे रे !

कली कली चारों ओर कली,
है सुगंध चारों ओर फली,
उड़ती फिरती रुन झुन रुनझुन,
उन्माद-रत थाति लिख दे रे !
पाति लिख दे रे !

जिसके लिए

कहो, क्या तुम्ही हो चिर-साध मेरी ?

आंगन में बैठा, बगिया में बैठा,
अपनी ही धुन के गहरे में पैठा,
जिसके लिए मैं लालायित रहा तरसता,
न रुक सकी गति निर्बाध मेरी !
कहो, क्या तुम्ही हो चिर-साध मेरी ?

सदा सांस में हैं सुर जीते जिसके,
चित में समाए चित्र मन-चीते जिसके,
जिसके लिए मैं मचलता रहा हुं पल पल सदा,
हो वही प्रीत अगाध मेरी !
कहो, क्या तुम्ही हो चिर-साध मेरी ?

स्वप्न से भी सुन्दर है चाह जिसकी,
अनुराग में डूबी है राह जिसकी,
प्राप्त हो जिससे पूर्णता मुझको
बनुं अजर अमर, हो वही आध मेरी !
कहो, क्या तुम्ही हो चिर-साध मेरी ?

दीप जले

नीले अम्बर में हैं जग मग दीप जले,
दीप जले, दीप जले जगमग दीप जले !

धुल गईं रे सुरमई आंचल की परतें,
झिलमिल झिलमिल लौ-प्रभा में अग-जग पले,
दीप जले, दीप जले जगजम दीप जले !

महक रहे चहक रहे जीवन के पल छिन,
हसते गाते क्षणों में हिल मिल कर ढले
दीप जले, दीप अले जगमग दीप जले !

छंट गया गर्वीली मावस का सागर,
चंद्रमा को साथ लिए आशा - पक्षी चले,
दीप जले, दीप जले जगमग दीप जले !

नीले अम्बर में हैं जगमग दीप जले,
दोप जले, दीप जले जगमग दीप जले !

अनुरोध

प्रिये, बोलो तो एक बार !

पड़े अधूरे सब गृह-काज,
चुपचाप धरे सब सुख-साज,
मनसा भूल चुकी आह्लाद,
भुला कर अनजाने विषाद
गुनगुनाओ तो एक बार !
प्रिये, बोलो तो एक बार !

खोलो अब यह बंद किवार,
क्रीडामय है मंद बयार,
छाने दो दृगों में खुमार,
अवरुद्ध कर अश्रुओं की धार
मुसकाओ तो एक बार !
प्रिये, बोलो तो एक बार !

पहनो झिलमिल रजत कंगन;
स्वीकारो यह मनुहार-क्षण,

स्वरित कर दो नूपुर झनझन,
भेद कर अवगुंठित चिलमन
सरसिज हो जाओ एक बार!
प्रिये, बोलो तो एक बार !

उल्लसित हास वरण कर लो,
नेह-रव से उर को भर लो,
अवसाद की पीड़ा हर लो,
सांझे जग में यों न डर लो,
हिये भाओ तो एक बार !
प्रिये बोलो तो एक बार !

संवारो उलझी लटाएं,
समेट लो बिखरी घटाएं,
पावस की उजली छटाएं,
त्याग कर मलिन निराशाएं
कली सी खिलो तो एक बार!
प्रिये बोलो तो एक बार !

उद्बोधन

प्रिये, मधुहास का मौसम आया !

धीमे धीमे महकी पुरवाई,
सर सरिता भर तरंग मुस्काई !
तुम नेहा चषक का कर दो दान,
तृषित अधरों का होवे सम्मान !
रक्त गुलाब की डाली पर उड़ते—
भंवरे ने गुनगुनाया, गाया !
प्रिये, मधुहास का मौसम आया !

अलस बदली ने ली अंगड़ाई,
खेल खेल में संध्या हो आई !
पल्लव-स्वर का कुछ ध्यान करो,
मुक्त कण्ठ से नेह का गान करो !
हमने पलकों के मन्दिर में है—
मंज़ुल मज़ुल इक स्वपन सजाया !
प्रिये, मधुहास का मौसम आया !

चंचल हो कर लहरें इठलाईं,
ठुमक ठुमक तट से जा टकराईं !
तुम नेह-सिद्धि का संचार करो;
मधुर मिलन का कुछ उपचार करो!
ब्याकुल हो कर गा रहा है चातक—
एकाकीपन का रव मुसकाया !
प्रिये, मधुहास का मौसम आया !

चयन

प्रिय ! तुम को अपना जाना !

क्या यह भूल थी मेरी,
उतारी आरती तेरी,
या केवल ऐसी इच्छा—
अनिच्छित बन कर जिसने तपाना और तपना जाना !
प्रिय ! तुम को अपना जाना !

श्रद्धा - पात्र बनाया तुझे,
पूजा - लक्ष बनाया तुझे,
तेरी धुन में रम कर खुद को केवल चलना माना !
प्रिय ! तुम को अपना जाना !

पथ निर्देश सुना मैंने,
तुम्हारा सच चुना मैंने,
मानी तुम्हारी हर बात जैसे हो मंत्र सयाना !
प्रिय ! तुम को अपना जाना !

दुविधा

जीवन पथ पर चुप चाप पड़ा मैं,
जाने क्या क्या सोचा करता हूं ?

रे कैसी है यह दुनिया मेरी,
पल पल छिन छिन चलती अंधेरी,
धनधनाती है पालें उड़ाती—
करती सच झूठ की हेरा फेरी !

देख कर कुटिल कुचालें सभी की,
अपना मन ही दबोचा करता हूं !
जीवन पथ पर चुप चाप पड़ा मैं,
जाने क्या क्या सोचा करता हूं ?

कोई कहता इसे मौन लहर है,
कोई कहता वीरान शहर है,
मैं क्या जानु' औ क्या भान करू'—
कहां पर कौन सी मेरी डगर है।

अवरोधों से पूरे सागर में,
अपने अवयब नोचा करता हूं !
जीवन पर पर चुप पड़ा मैं,
जाने क्या क्या सोचा करता हूं ?

अलगावमय घेराव में कस कर,
हूं घुटन भोगता स्वर समरस कर,
तपती ज्वाला के सेंकों में क्या
काली बदली में भी हस हस कर !

जलते रहने की है मजबूरी
विवश हुआ तन पोचा करता हूं !
जीवन पथ पर चुपचाप पड़ा मैं
जाने क्या क्या सोचा करता हूं ?

हस रही तुम

हस रही तुम कण कण में !

री, चातक मन की प्यास,
है घट रही अनायास,
मंद मंद सरल-वात सरस रही है मधुबन में !
हस रही तुम कण कण में !

मर्मर सर सर मधु गीत,
सुन रहा अली मधुमोत,
उर पीड़ा लोप हुई पात पात के कम्पन में !
हस रही तुम कण कण में !

मधु ऋतु दे रही चुम्बन,
परिमल केलि करता मन,
लोक का नहीं ध्यान मुझे, हूं आलोकित क्षण में !
हस रही तुम कण कण में !

तुमरे द्वार

आह ! दर्द बना जब मेरा हार,
भागता आया मैं तुमरे द्वार !

जग की गलियों में भटका भटका,
भव चोराहे में अटका अटका,
तरह तरह के अवरोध झेलता खोजता फिरता पथ की पतवार !
भागता आया मैं तुमरे द्वार !

जीने की कोई राह न मिलती,
मरने की कोई चाह न मिलती,
हूं क्षोभ भोगता विछिन्न मन से विक्षिप्त-सा लगता सब संसार !
भागता आया मैं तुमरे द्वार !

ऐसे कैसे आयू बीते गी,
यह भरती गागर भी रीते गी,
अभय अभ्युदय-अभिलाषी जगती-द्रोपदी सहती कौरव मार !
भागता आया मैं तुमरे द्वार !

अभिनन्दन

कमल-कुंज पर उड़ती तितली,
सतरंगे पर स्फुरती निकली,
मनहर कितना अभिनन्दन है !

चटकती गंध को सरसाती,
वसुधा को चहुंदिश हर्षाती,
नेह की सुधा पी कर गाती, सुधबुध आज सबहि अर्पण है !
मनहर कितना अभिनन्दन है !

नीरव मन में झकृत कर स्वर,
आ बैठती पल्लवित तरु पर,
परिमल पराग अंग लगाती, प्रकृति को करती शत बंदन है !
मनहर कितना अभिनन्दन है !

सिंचित कर विरही की आशा,
फलित करती मिलन की भाषा,
पंख स्फुरण कर घर से निकली, सरल अवयवों में थिरकन हैं !
मनहर कितना अभिनन्दन है !

पर

गायन बहुत हैं गाने को,
पर नहीं एक बहलाने को !

कितने सुर मैं धुन चुका हूं,
कितने सुर तू सुन चुकी है !
हर स्वर को प्राथमिक कहती—
तू जाने कित बुन चुकी है !

सावन बनी तू जाने को,
मैं कहता तुझे छाने को !
गायन बहुत हैं गाने को,
पर नहीं एक बहलाने को !

भीतर का यह छण्द प्यारी,
रचता है मृदु बन्द प्यारी !
कली कली पर उड़ती आलि,
इठलाती विभावित क्यारी !

कली खिली क्या सकुचाने को,
भंवरा बना रिझाने को !
गायन बहुत हैं गाने को,
पर नहीं एक बहलाने को !

धुवां उठता घन-सा काला,
श्यामल श्याम भया उजाला !
विभावित अभिलाषा के हित,
कुंज कुंज में भरता हाला !

निज भाव तुझे जताने को,
अंतर्मन के लुभाने को !
गायन बहुत हैं गाने को
पर नहीं एक बहलाने को !

सावन से

हो चली मद्धिम नेह की जोति,
रे सावन तुम आज चले !

अंकुर पाने को था चिर अभी, मेरे सुख की आशा को !
मुकुलित होने को थे पल अभी, मधुलेही मधु - भाषा को !
यह कैसा बिराग दिया तुमने, छोड अधूरे काज चले !
हो चली मद्धिम नेह की जोति, रे सावन तुम आज चले !

है नहीं कल पर विश्वास मुझे, कल कब तुम आ पाओगे !
विरहाग्नि में तप्त हुए हृदय पर, रस-रहस सहलाओगे !
छेड़ कर टीसते गीत मेरे, बिन झंकारे साज चले !
हो चली मद्धिम नेह की जोति, रे सावन तुम आज चले !!

कुछ दिन के लिए रुक जाते तो, मेरी सुधि सुख से गाती !
दर्द न होता विदा का मुझ को, न यह बात मन में आती !
भोला चातक बिचलित भाव है, त्याग कर यह सुराज चले !
हो चली मद्धिम नेह की जोति, रे सावन तुम आज चले !

तेरी प्रीत

तेरी प्रीत बड़ी भोली है !

न पूछ मैं क्यों ललक रहा हूं ! विचार तेरी झलक रहा हूं !
आयु भर यों मुस्काती रहो,
मीठे सुरों में गाती रहो !
सुनता रहूं मैं नयन मीचे, मधुर बड़ी तेरी बोली है !
तेरी प्रीत बड़ी भोली है !

देखा तुमको जीवन पाया ! जैसे मीत मिला मन भाया !
जी ही जी में यह रटन लगी !
जोत जगी सुख की जोत जगी !
मेरे आंगन की शोभा - सी तू आशाओं की डोली है !
तेरी प्रीत बड़ी भोली है !

सुंबल बेला-सी तनु-तनिमा ! हो तुम चंद्र किरण की गरिमा !
रूप मेरी मधु कल्पना का !
भाव मेरी प्रिय स्पंदना का !
मान ले, बस मान ले सजनी, यह मन ही तेरी खोली है !
तेरी प्रीत बड़ी भोली है !

द्विपदावलियां



हवा कुछ इस तरह से महकी. कुछ इस तरह से लहरायी,
तितलियों ने सरल पर खोले, भ्रमरों ने बंसो बजायी.

आहट हुई द्वार पर ऐसे, सच होते से लगे सपने,
रोमांचित ललकन के मद में हमें रटन प्रीत की भायी.

उमड़ा नेह जब चांदनी से, सितारों ने शत्रुता करली,
चांद तो तपता रहा मन में, नींद हमने भी गवायीं,

आंख मिल पाई जभी आंख से, आग चांदनी बन गई,
रज-रश्मियां बन गईं सितारे, राग चांदनी बन गई,

सांझ ला रही है सौगात,
चांद तारों से भरी रात.

मेरे गीतों में बसे हुए,
दुख दर्द गम और आघात.

हमने थाम लिया चुपचाप,
दे गई जो आपकी ज़ात.

सहा हमने खूब सहा,
कहा आपने जो कहा.

आप थे पाषाण हृदय,
मन यह किन्तु मोम रहा.

आग - सी है जंगल में,
जल न जाने कहां बहा.

सलिल है दरियाओं में,
रहे धूल में खग नहा.

सायों की बातें न कर ये दीवाना बना देते हैं,
अपने पराये सब ही से बेगाना बना देते हैं.

छलावे समय के बड़े संगदिल बड़े मासूम यारो,
मस्ताना बनाते हैं फिर अनजाना बना देते हैं.

कुहरे में डूबी हुई राहों पे धुंध के अफसाने,
किसी की उलझी आंखों को मयखाना बना देते हैं.

आप नाहक हमें उलाहना देते हैं,
हिम-आच्छादित झील पर नाव खेते हैं.

अक्सर मिल जाते हैं ऐसे लोग हमें,
पतझड़ भी जिन को सनम-से चहेते हैं.

हवा चप है. पेड उदास, निर्झर गुमसुम,
कुहिरे की छांव में सब सांस लेते हैं.

चलाते हो कुदालें बर्फ की शिला पर,
भूल कर यह कि नीचे पत्थर, रेते हैं.

तुम कुछ नहीं किन्तु मेरा खुश-खयाल हो,
करो कुछ कि न मेरा खयाल पामाल हो.

छूट जाते हैं नींद के सब बहाने,
जब सामने खड़ा किसी का सवाल हो.

वह नौका साहिल तक कहाँ जाती है,
जीर्णता भोग रहा जिसका पाल हो.

तेरी मनना है सुन्दर नाम सखकर,
पावस में फूल रही जैसे डाल हो.

अवसरवादी बने रहो जागने से सोने तक,
नौबतें आ जाएगी वरना भाग्य के रोने तक.

बरसात आएगी ज़रूर हमारा यह भाषण है,
आए तो न आए, आएगी अगली फसल बोने तक.

घर बेच कर खुद को रखदो गिरवी चलो शान से,
बेशक न खबर ले कोई खूने जिगर होने तक.

प्यार को और गहरा हो लेने दो,
स्वप्न का धरातल संजो लेने दो.

तुम से बढ़ कर न लगे सपना कोई,
दृग द्वार बन्द कर के सो लेने दो.

इन्द्रधनुष के रंगों से परिचित हैं,
हर रंग को एक रंग हो लेने दो.

कहा बहुत हमने और सुना तुमने,
नेह से नेह के पल बो लेने दो.

अतिः कोमल सुकुमार हो तुम,
अपना रुपहला प्यार हो तुम.

रात की बात न करना कभी,
सजरी सुबह का सार हो तुम.

श्यामल घटाओं का सजीला,
सर्वव्यापी श्रृंगार हो तुम.

ऋतुओं की पायल में गुंजित,
मदमाती मधु बहार हो तुम.

हाला का प्याला रहने दो,
मस्ती से भरा खुमार हो तुम.

हुआ क्या अगर हमने मन को निसारा नहीं,
है अपना हमारा कोई तुम्हारा नहीं.

चलते हैं आपको बिठा कर कधों पे हम,
फिर भी यह कहा करते हैं कि पुकारा नहीं.

पीने वाले तो यों ही पिया करते सदा,
गिर जाते हैं जिनका कोई सहारा नहीं.

आप ही की सौगंध हमें आप प्यारे हैं,
मिट गए तो न कहना कि कोई किनारा नहीं.

हर रहे हैं कितनो ही द्रोपदियों के चीर,
नहीं आते मोहन तो कोई चारा नहीं.

बैठ तो लो कभी आकर घर में 'आनन्दम्',
कहोगे कल कि किसी ने अंकवारा नहीं.

दिल दिल हर दम दिल किए जा रहे हैं,
कुछ अजब तरह से जिए जा रहे हैं.

चुकाने के लिए सब पुराने कर्ज़,
सोच नए ऋणों को किए जा रहे हैं.

तेरे यौवन का यह असर देखा,
मद्य समझ कर जल पिए जा रहे हैं.

विष भी हो जाता है जब बेअसर,
लगता है अमरत पिए जा रहे हैं.

तुमने जहां रक्खे थे कदम अपने,
उस जगह का बिम्ब लिए जा रहे हैं.

पल जाए नए परिधान का भरम ही,
उधड़े लिबास को सिए जा रहे हैं.

इन्द्रवज्रा ग़ज़ल

आओ न आओ तुम मीत ही हो,
गाता रहा जो वह गीत ही हो.

खोया न पाया यह रीत कैसी,
भोगी हुई प्रीत पुनीत ही हो.

आशा सुहानी मदमा रही है,
हारी हुई आखिर जीत ही हो.

देखो बहारें मधु बांटती हैं,
लूटो नज़ारे प्रिय प्रीत ही हो.

नाचो नचाओ मन को रिझाओ,
चाहे दिशा भी विपरीत ही हो.

आप भी बहुत कमाल करते हैं,
याद ताज़ा हर साल करते हैं.

आपकी सादगी के क्या कहने,
कमसिनी से बेहाल करते हैं.

आदमी क्या है आदमीयत क्या,
दुनियादार कब ख्याल करते हैं.

सड़क के दिल में है क्या समाया,
बीत रहे क्षण सवाल करते हैं.

और आगे चल जातीं मछलियां;
जितो भी आगे जाल करते हैं.

रहा नहीं संबल,
पल पल मन बेकल.

धुंध ही धुंध है,
डूबा उदयाचल.

पलते रहते भ्रम,
बढ़ते रहते छल.

हंस चुगते रेत,
कागा मानक फल.

उपमा हैं कैक्टस,
सब छद गए बदल.

चल 'आनन्दम' चल,
पान कर हलाहल.



हमें न छेड़ो हम दीवाने हैं,
किसी के नाम के मयखाने हैं.

है भोर गाता सहर के तराने,
जीना पड़ा लो उमर के बहाने.

जानें वो कौन थी शबनम की तरह जो आ कर चली गई,
एक आशना की तरह सर-ए-महफिल गुनगुना कर चली गई.

नींद की गोलियों से लगन लगाते हैं लोग,
किस किस भांत के उपचार अपनाते हैं लोग.

गिरवी पड़े हुए दिनों को इतनी हो कथा है,
अपने ही सुखों से पराजय पाते हैं लोग.

नेह के अभाव में नेह-आकांक्षो क्या करें,
मीठे में लिपटा हुआ ज़हर खाते हैं लोग.

जीवन यदि सस्ता नहीं मौत कहां सस्ती है,
समय आने पर ही दर समझ पाते हैं लोग.

यों ही न करते रहो जमा बाकी का हिसाब,
ज़र्ब तकसीम भी तो खूब कराते हैं लोग.

अपने घर आंगन का कैसे निखरेगा रूप,
समझते हैं सभी किन्तु भूल जाते हैं लोग.

काफी तरह की दुनिया देख चुका 'आनन्दम्'
तर्कश में तीर लिए रिश्ते जताते हैं लोग.

होती है जिसकी हार कभी तो जीत भी होती है
काल सरित होती है बैरी तो मीत भी होती है.

यों ही नहीं मंडराया करते अली रस के लोभी,
पीछे रस के छिपी हुई यारो प्रीत भी होती है.

बतयाते न रहा करो यों ही इधर उधर की बातें,
बात बेबात की आखिर कोई रीत भी होती है.

लम्भी उमर तक कोसा किए बहुत जुदाई की घड़ियां,
सिद्ध किया है अनुभव ने कि यह मधुभीत भी होती है.

अखियां बन्द किएचलने वालो कुछ तो समझ करो अब,
अपने कदमों की दिशा कभी विपरीत भी होती है.

करते हो अवहेलना दर्द की किन्तु नहीं जानते,
दिल चीर के निकले जो पंक्ति वह गीत भी होती है.

रूप की गहराई में चांद को देखा तारों को देखा,
कुहिरा की झीनी परत में नहातीं बहारों को देखा.

सागर का अंचल था नीला साहिल भी था गीला गीला,
दोनों की आंख मिचौली में पल रहे इशारों को देखा.

लहरें थीं उन्मत्त चंचल नावों से लिपने को उद्यत,
मछलियों की बांकी चितवन में नर्तन नज़ारों को देखा.

किसी के नयन-कोरों में कजरारे कजरारे डोरों में,
पनपते हुए अपने सपनों के दुर्लभ सहारों को देखा.

सुंबल-सी श्यामल घन-केश-राशि कोमल और सूक्ष्म,
मेघावली के बिम्बों-से लहराते हज़ारों को देखा.

चुम्बन के प्यासे अम्बर को आलिंगन प्यासे गिरिवर को,
दर्शन प्यासे निर्लेप क्षितिज के मस्त हुलारों को देखा.

हाव थे सूक्ष्म बहुत प्रणय अभिसार के,
दे गए आह्वान हमें झोंके बयार के.

सहसा ही टकरा गए सितारे गगन के,
देख कर इस धरा पर नखरे बहार के,

इस भांत छिड़ा था रव अलि का उपवन में,
सुध जग गई जग गए भाव कली-हार के.

दीवाने बहुत हैं मधुबाला के द्वार,
मधुशाला में हैं बैठे पग पसार के.

देखे हुए हैं दरीचे मेघदूत के.
दृश्य बहुत हैं यक्ष-प्रिया के शृंगार के.

लगता है फिर किसी भस्मासुर को दे चुके हैं वरदान शिव,
धारें गे विष्णु कहीं मोहिनी रूप तो पाएं गे त्राण शिव.

हर तरफ हाहाकार मची है हर तरफ त्राहि त्राहि का शोर,
शायद किसी जालन्धर के घबराए हुए भग गए हैं प्राण शिव.

शिव के पुजारी हताश हो पाएंगे भला कब, कदापि नहीं,
उनकी भक्ति है शंकर, शक्ति हैं शंकर और ज्ञान-ध्यान शिव,

सृष्टी सति की साधना में क्या फर्क रहता हैं अभी कोई,
सह सह कर संहार बारम्बार प्राप्त कर पाएगी गान शिव:

अंतर्ध्यान हैं बहुत क्या समाधो में अपने इष्ट के हेतु,
सुनाने पर भी नहीं सुन पा रहे दर्द के समूह गान शिव.

सागर मंथन से उपलब्ध हुए विष से जग-रक्षा के दानी,
दे पा रहे नहीं क्यों वैमनस्य से रक्षा का अनुदान शिव.

सुन रहा है 'आनन्दम' कि जग में शंकर हैं घूम रहे बहुत,
देखने को आंख हो तो दीख ही जाते हैं पवमान शिव.

दो इन्द्रवज्रा ग़ज़लें

को संग रीझें किसको रिझाएं;
चारों दिशाएं घनघोर गाएं.

छोड़ो पुरानी हर बात झूठी;
बीती हुई को अब क्यों बुलाएं.

रागी हुआ है मन का घरौन्दा,
पांखी भला क्यों घर को न आएं,

आकाश व्यापी रुख है सभी का;
भू को सजाने किसको लिवाएं.

प्यारे सुहाने मदहोश नैना,
जागे रहे प्रीतम हेत रैना.

हाला भरे हैं मधुकोष दोनों,
आंका किये हैं जिमि भाव पैना.

आ न सके वो सब द्वार देखे,
गाहे ब़गाहे मन को न चैना.

मेरी तुम्हारे प्रति चाह ऐसी,
कोई कहे क्या इक बी न बैना.

आदमी हो कर आदमी को करते रहते हो बदनाम,
बोलो इसके सिवा नहीं है रहा आप को कोई काम.

किस कारण चल रहे हैं आप भयावह जंगलों की ओर,
पसंद नहीं किया करते क्या हंसती बसतियों की शाम.

दिखाई देता है क्यों भला स्वार्थ अपना ही आपको,
छूट जाओगे अकेले तो कौन लेगा आपका नाम.

पानी भी कहां सस्ता है जो लहू बहाते हो इस तरह
कुछ भी करो आता है आखिर को लहू हो लहू के काम.

बिना सहारे एक दूसरे के कोई जी सकता किस तरह,
कैसे हो सकती है नमस्ते सतसिरीकाल और सलाम.

आग पानी पृथी आसमान और हवा सब जरूरी हैं,
कहे कोई अकेला ही वह खुद बखुद में कैसे तमाम.

कौन है जो दूसरे से कुछ मांगता नहीं कठिन वक्तों,
किसी न किसी विध हैं जुड़े हुए आपस में सब के सब ग्राम.

पराजित की हनना 'आनन्दम' कहां का शौर्य है बोलो,
लोग तो सह रहे बहु भांत से अभाव-ग्रस्त मौत की घाम.

प्रतिदिन बन रहा इश्तहार आम आदमी,
चल रहा है ज्यों अखबार आम आदमी.

जीत की खुशियां मना सकेगा कब भला,
पाता है हार पर हार आम आदमी.

भीड़ कुछ इस तरह बढ़ रही है धूप में,
महरूमी का है शिकार आम आदमी.

अभाव जन्य तमस के लिहाफ में घिरा,
सूरज का है तलबगार आम आदमी.

ले दे कर सागर के पास है और क्या,
इस पार भी है उस पार आम आदमी.

जीवन की रत में उजाले का गीतकार,
है बनजारे सा हुश्यार आम आदमी.

शहर के ज़हर में डूबती गांव की ज़िन्दगी,
कदम कदम देखिए झूझती गांव की ज़िन्दगी.

शहर के ज़हर में डूबती गांव की ज़िन्दगी,
तिल तिल है ठिरती फिसलतो गांव की ज़िन्दगी.

वही सिलवटें हा करवटें वही मजबूरियां,
हुई जिन पर हमेशा सती गांव की ज़िन्दगी.

सपनों की राह पर दीपक जलाए आस्था के,
कभी मस्त मस्त थी बहती गांव की ज़िन्दगी.

जल दिए हैं कुंकुम, खुल गए स्कूल गाड़ियां चलीं,
सड़क को मगर है खोजती गांव की ज़िन्दगी.

आहों कराहटों के कुहासे में सनी हुई;
डूब गई पत्थर पूजती गांव की ज़िन्दगी.

एक गैली से दूसरी गैली तक 'आनन्दम्,
खुद की पहेलियां खोजती गांव की ज़िन्दगी.

लगता है बार बार कि घिसट रही है ज़िन्दगी,
लो, आखिर किसी तरह तो कट रही है ज़िन्दगी.

देखे बहुत हैं लोग बाग एहसान फरामोश.
आठों पहर एक ही बात रट रही है ज़िन्दगी.

है कुहराम सा मचा हुआ मौसमी बहार में,
फिर महसूस क्यों न हो कि उलट रही है ज़िन्दगी.

रहते ज़मीन पर हैं किन्तु अम्बर की सोचते,
हमने तो देख लो सदा बट रही है ज़िन्दगी.

क्यों कर कहे कोई किसी से धैर्य की बातें,
अपनी ही धुन में जब नटखट रही है ज़िन्दगी.

अंकवार में भर चांदनी को जो लिया हमने,
प्रेयसी-केश राशि की सिलवट रही है ज़िन्दगी.

नादानी में सब भूल जाता है 'आनन्दम्',
पिपासित करे याद कि पनघट रही है ज़िन्दगी.

ज़िन्दगी लगता हैं गुबारा हो गई है,
हवाओं के रुख पर गवारा हो गई है.

ऐसे चलें या वैसे चलें लोग यह सब,
हर सड़क आज एक चौराहा हो गई है.

क्या करें किससे दें उलाहना हम यारो;
गेह की हर दीवार कारा हो गई है.

सोच सुबह की हैं और ज़िकर है शाम का,
दुपहर मानो ऋण का चारा हो गई है.

लाख करें तदबीरें चैन की नींद आए,
हर घड़ी एक भय का इशारा हो गई है.

आओ पास हमारे हृदय की बात कहें,
हर कहानी व्यथा की दारा हो गई है.

तुम सुनो हमारी तो सुना दें 'आनन्दम',
यह हवा भी आग की धारा हो गई है.

रूपांतरित ऋतु के परिधान हैं क्या क्या,
छन्द क्या क्या कवित और गान हैं क्या क्या.

कहीं दांत बजते कहीं गाल लाल लाल,
ठिठरते तन बदनों के मान हैं क्या क्या.

पिक गए तो पर्वतों से कांव उतर आए,
सुनिए तो ज़रा उदित सुर - तान हैं क्या क्या.

स्वपन-गार सजाने को चल दिए हैं सब,
असमर्थ के देखो सामान हैं क्या क्या,

डल जमा हुआ सूई - सर पर कुहरा,
मानसर पर धुंध के आख्यान हैं क्या क्या.

पूरी उम्र किया क़िस्सा ब्यां जवानी का,
अंदाज़ होने के नादान हैं क्या क्या.

किसी का दुख किसी का दर्द नहीं जानें,
पाल रखे दिलों में शमशान हैं क्या क्या.

'चल दरया में डूब जाएं' गाते लोग,
बदलते हुए दौर के जहान हैं क्या क्या.

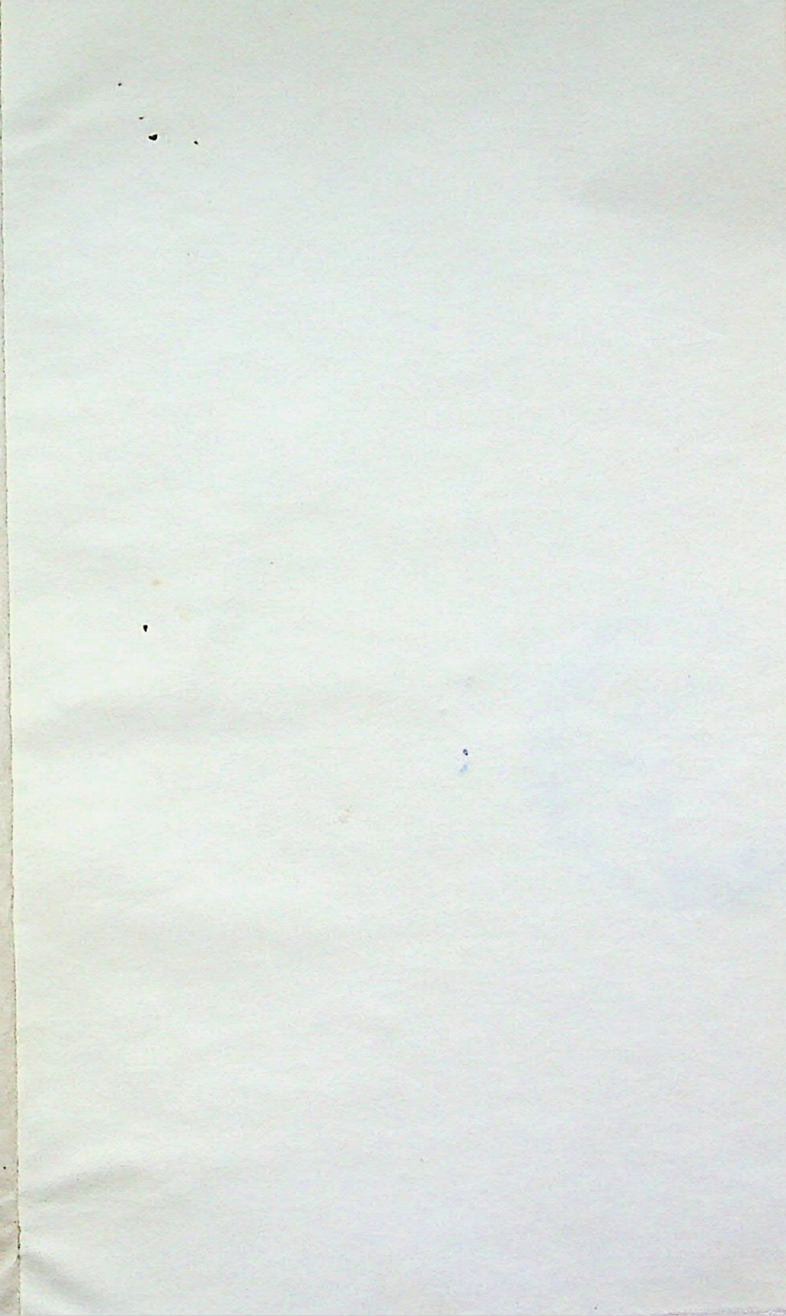
आ गए हम एक ऐसे मकाम पर,
दोस्त सब चल दिए तनहा छोड़ कर:

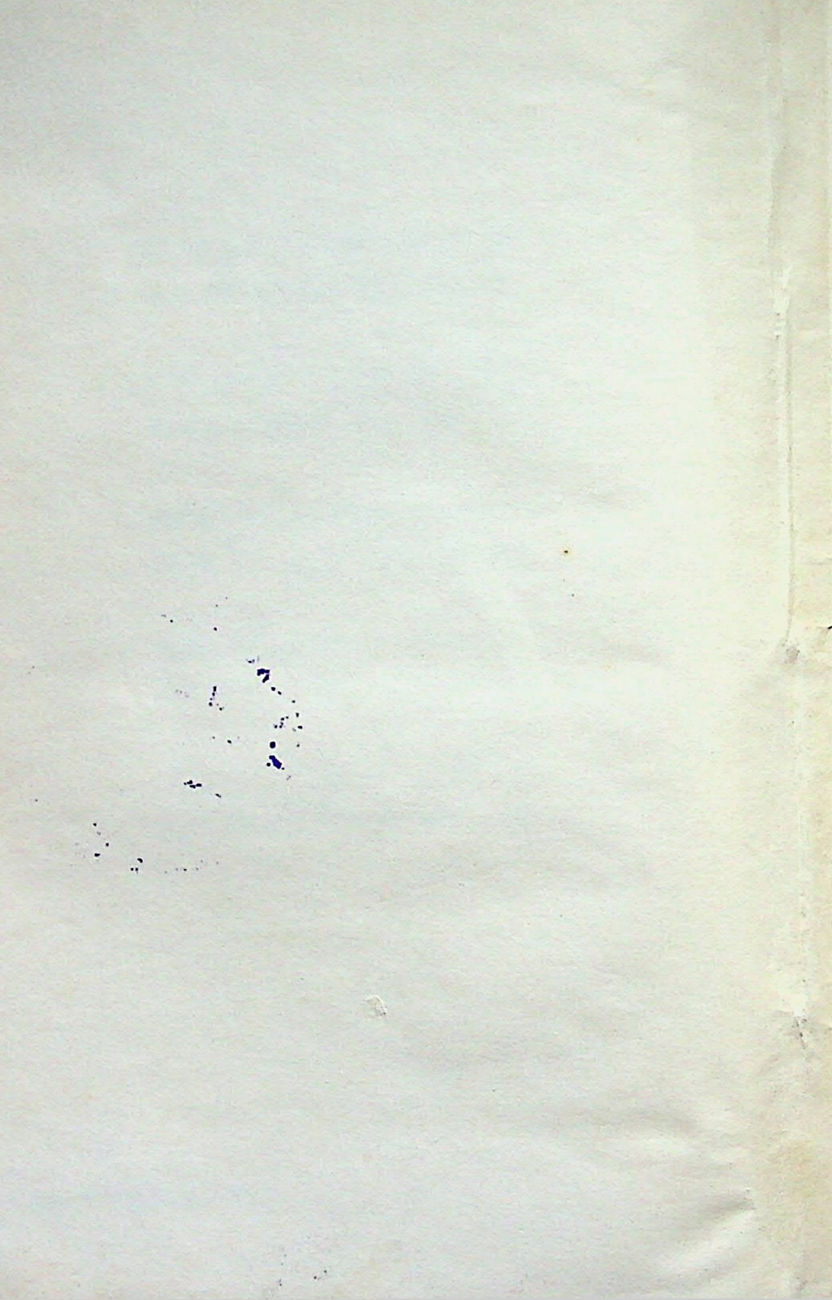
न वो तसल्ली है अब न वो मस्ति,
चला गया मौसम मुंह मोड़ कर.

करीब थे हम करीब मंज़िल के,
फिसल कर रह गए माथा फोड़ कर.

न यह ज़िन्दगी है न वो ज़िन्दगी,
थक चुके हैं बहुत दोड़ दोड़ कर.

फासले बढ़ गए हैं इस तरह से,
चल रहा हूं भिदो नाव जोड़ कर.





'आनन्दम्' की रचनाएं

(प्रथम संस्करण की तिथियों के साथ)

● हिन्दी :

तिनके और तिनके	(हास्य व्यंग्य)	सितम्बर १९६५
देखतीं आकाश आंखें	(कविता संग्रह)	दीपावली १९६८
काम्प काम्प रहा चक्रबन्धु	(संगीत रूपक संग्रह)	अक्तूबर १९७२
नौका का इतिहास	(पुरस्कृत कविता संग्रह)	जनवरी १९७४
एलबेट्रास की हत्या	(कालरिज के 'राइम आफ एंशिएंट मेरिनर' का रेडियो नाटय रूपांतर)	जनवरी १९७७
सांझे मंच पर	(रंग नाटक)	जनवरी १९७५
हम हैं बालक भारती	(बाल कविताएं)	दिसम्बर १९७०
आखरी पन्ने	(पुरस्कृत तीन नाटक)	जूलाई १९८१
कमल पत्र पर डोलता जलकण	(कविता संग्रह)	मार्च १९८४
कि वे बोलें	(कविता संग्रह)	जून १९९१
बाम के झरोखे से	(प्रारम्भिक कविताएं)	अगस्त १९९२

● डोगरी :

परसे दी खुशबू	(नाटक)	अगस्त १९८९
पनछान	(पुरस्कृत 'सच्चा दे सरिस्ते' समेत दो नाटक)	अप्रैल १९९०
ग़ज़ल : नमें छन्द	(अनुसंधान पत्र : सार)	मेई १९९०
ग़ज़ल : नमें छन्द	(अनुसंधान पत्र–२ : सार)	दिसम्बर १९९०
लैह्‌रें दे जाल	(व्यंगी लघु कत्थां कहानियां)	जुलाई १९९२
ग़ज़ल : नमेंछन्द	(भाग १-२ समेत सम्पूर्ण अनुसंधान)	प्रैस में

● अनुवाद :

पसीने की महक ('परसे दी खुशबू' का हिन्दी अनुवाद)

● तथा : मानसी शर्मा द्वारा

मुसीबतों का पहाड़	(नाटक)	दिसम्बर १९८७



साथर प्रकाशन

४०२–अम्बफला, जम्मू (तवी) १८०००५